

॥ श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ॥

अध्याय 12: भक्तियोग

2/2 (श्लोक 12-20), शनिवार, 14 जून 2025

विवेचक: गीता प्रवीण ज्योति जी शुक्ला

यूट्यूब लिंक: https://youtu.be/il2v_9EjaNg

भक्त के विशेष-लक्षण

लर्नगीता के मधुर गीत, मधुराष्टकम्, सरस्वती वन्दना और दीप प्रज्वलन से सत्र का आरम्भ हुआ।

भगवान् श्रीकृष्ण और सद्गुरु स्वामी श्रीगोविन्ददेव गिरि जी महाराज के पावन चरणकमलों को वन्दन कर, हमने पिछले विवेचन के श्लोकों में देखा था कि भक्ति किस प्रकार से की जाती है। प्रभु के सगुण-साकार अथवा निर्गुण-निराकार रूप से, ध्यान करके, अभ्यास योग करके, अपने निहित कर्म करते हुए, कर्मफल का त्याग करके आदि कई प्रकारों से भक्ति की जाती है।

आज हम भगवान् श्रीकृष्ण द्वारा प्रतिपादित भक्तों के लक्षण देखेंगे।

श्रीभगवान् ने श्रीमद्भगवद्गीता के अध्याय बारह में भक्त के उनतालीस (Thirty Nine) लक्षणों का वर्णन किया है।

12.12

श्रेयो हि ज्ञानमभ्यासाज्, ज्ञानाद्ध्यानं(वँ) विशिष्यते।
ध्यानात्कर्मफलत्यागः(स), त्यागाच्छान्तिरनन्तरम् ॥12.12॥

अभ्यास से शास्त्रज्ञान श्रेष्ठ है, शास्त्रज्ञान से ध्यान श्रेष्ठ है (और) ध्यान से (भी) सब कर्मों के फल की इच्छा का त्याग (श्रेष्ठ है)। क्योंकि त्याग से तत्काल ही परम शान्ति प्राप्त हो जाती है।

विवेचन- श्रीभगवान् कहते हैं, अभ्यास (practice) से शास्त्रज्ञान (knowledge) श्रेष्ठ है। यदि अपनी पाठ्य पुस्तक का कोई पाठ हमें समझ में नहीं आया है परन्तु बार-बार अभ्यास (practice) करके हम उसे स्मरण कर भी लेंगे तो भी उसमें कही बातों को जीवन में नहीं उतार पाएंगे। इसलिये श्रीभगवान् ने ज्ञान को अभ्यास से श्रेष्ठ कहा है।

श्रीभगवान् आगे कहते हैं कि शास्त्रज्ञान से ध्यान (Meditation) श्रेष्ठ होता है। श्रीभगवान् का ध्यान करने से हमें ज्ञान की प्राप्ति होने लगती है।

ध्यान से भी श्रेष्ठ होता है, कर्मफल का त्याग करना। अपने किए गए सभी कार्य के फल, कार्यफल से हमें निर्लिप्त (detached) हो जाना चाहिये।

हमें अपनी पढ़ाई (कर्म) पूरा मन लगा कर करनी चाहिये परन्तु परीक्षा में हमें कितने अङ्क (marks) प्राप्त होंगे (कर्मफल), उस पर अति विचार नहीं करना है, उससे उदासीन, निर्लिप्त रहना है।

भक्तों में क्या-क्या लक्षण (qualities) होने चाहिये? यह हमें आगे के श्लोकों से ज्ञात होगा।

12.13

अद्वेष्टा सर्वभूतानां(म्), मैत्रः(ख) करुण एव च निर्ममो निरहङ्कारः(स), समदुःखसुखः क्षमी॥13॥

सब प्राणियों में द्वेषभाव से रहित और मित्र भाव वाला (तथा) दयालु भी (और) ममता रहित, अहंकार रहित, सुख दुःख की प्राप्ति में सम, क्षमाशील, निरन्तर सन्तुष्ट, योगी, शरीर को वश में किये हुए, दृढ़ निश्चयवाला, मुझ में अर्पित मन बुद्धि वाला जो मेरा भक्त है, वह मुझे प्रिय है। (12.13-12.14)

विवेचन- श्रीभगवान् ने भक्त के **उनतालीस (Thirty Nine) लक्षण बताए हैं**। यदि हम भगवान् के प्रिय (favourite) बनना चाहते हैं तो हमारे अन्दर आगे बताए हुए लक्षण, गुण होने चाहिये।

बच्चों, आप देखिये कि इनमें से कौन से गुण, लक्षण आप में हैं और आपमें उपस्थित (present) प्रत्येक गुण को, आपको एक से दस के बीच अपने स्वयं को गुण (marks) देना है। कुल तीन सौ नब्बे (Three Hundred and Ninety) अङ्क इन गुणों के लिए होंगे।

पहला लक्षण है, **अद्वेष्टा** अर्थात् किसी से द्वेष (hate) नहीं करना। कोई यदि कक्षा में आपसे अच्छे अङ्क (marks) लाता है या प्रतियोगिता में आपसे आगे आता है, तो हमें उससे द्वेष नहीं करना चाहिए। हमें उसका अभिनन्दन (wish) करना चाहिये।

मैत्रः, सभी से मित्रता का भाव रखना।

आजकल बच्चे अपने सङ्गठन (Group) बना लेते हैं, सबको उपनाम (nick name) देते हैं। एक ग्रुप वाले स्वयं को दूसरे सङ्गठन वाले बच्चों से श्रेष्ठ (superior) समझते हैं। ये सब नहीं करना है। हमें सभी से मित्रता रखनी है।

करुण एवच, हमारे मन में सभी के लिए करुणा होनी चाहिये। हम जब अपने छोटे भाई, बहन को पढ़ाते हैं तो क्रोध न करें, न उन्हें मारें। यदि कोई पक्षी या जानवर प्यासा दिखे तो उसे पानी पिलाएँ, खाना दें।

किसी को दुःखी देख कर हमें उससे करुणापूर्वक व्यवहार (kindness) करना चाहिये।

निर्मम, अर्थात् 'मैं' की भावना से रहित होना। हमारे मन में अपनी वस्तुओं के प्रति स्वामित्व वाली भावना (possessiveness) नहीं होनी चाहिये। यदि कक्षा में कोई हमारी कलम (Pencil) आदि लिखने के लिये ले तो हमें उसे लिखने को दे देना चाहिये। वस्तुओं को दूसरे के साथ बाँटना (to share) हमें सीखना चाहिये।

निरहङ्कारः(स), हमें अहङ्कार (pride) नहीं रखना चाहिये। हमें अपने अच्छे अङ्कों (marks) के लिए या किसी प्रतियोगिता में जीतने पर घमण्ड नहीं करना चाहिये।

आगे का लक्षण है, **समदुःखसुखः क्षमी** अर्थात् वो व्यक्ति जो सुख और दुःख दोनों ही परिस्थितियों में समान (balanced) रहता

है।

अपनी जीत या अच्छे अङ्को पर या माता पिता के लिए किसी प्रिय खिलौने या महँगी वस्तु पर, हमें बहुत ज्यादा प्रसन्न हो कर अहङ्कार नहीं करना चाहिये।

कुछ बच्चे अपने मन के विरुद्ध हुई किसी बात से बहुत दुःखी हो जाते हैं, घर में किसी से ठीक से बात नहीं करते हैं, गुस्सा हो जाते हैं और भी बहुत कुछ नाटक करते हैं। ऐसा नहीं करना चाहिये।

इस प्रकार के व्यवहार से वे श्रीभगवान् के प्रिय नहीं बन सकते, इसे ध्यान में रखें और सम भाव में (balanced) रहें।

दूसरों की प्रसन्नता में हमें भी प्रसन्न होना आना चाहिये।

अगला लक्षण है, **क्षमी** याने क्षमा (to forgive) करना। हमें दूसरो को क्षमा करना भी आना चाहिये। हमें दूसरो की छोटी-मोटी धृष्टता (Mistakes) की उपेक्षा (ignore) करनी चाहिये।

12.14

**सन्तुष्टः(स) सततं(यँ) योगी, यतात्मा दृढनिश्चयः।
मय्यर्पितमनोबुद्धिः(र), यो मद्भक्तः(स) स मे प्रियः॥12.14॥**

विवेचन- भक्त का अगला लक्षण है, **सन्तुष्टः(स)** याने सन्तुष्ट (satisfy) होना, **सन्तुष्टः(स) सततं(यँ) योगी।**

जो बच्चे हर समय नये कपड़े, खिलौने आदि के लिए हठ करते हैं। आवश्यकता नहीं होने पर भी किसी वस्तु की इच्छा करते हैं। हमें अपनी इच्छाओं (desires) को वश (control) में करना है, कम करना है। आवश्यकता के अनुरूप ही इच्छाएँ करनी चाहिये।

जैसे टीवी वाले डोरेमोन में जब नॉमिता अपने दोस्त के पास नए यन्त्र (gadgets) या खिलौने देखता है तो डोरेमोन के पास जाकर फूट-फूट कर रोने लगता है और उस चीज के लिए ज़िद करने लगता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि डोरेमोन मन में सन्तुष्ट नहीं है, वह हर समय दूसरों से तुलना (compare) करता रहता है, इसलिए आए दिन अपने मन में नई-नई इच्छाएँ उत्पन्न करता रहता है। हमें ऐसा नहीं करना है। जो कुछ हमारे पास है उसमें हमें सन्तोष कर प्रसन्न रहना है।

अगला गुण है, **यतात्मा**, याने आत्म नियन्त्रण (self control)।

जब पढ़ाई कर रहे हैं तो हमारे मन में टीवी देखने या खेलने जाने के लिए मन में आता है, तो हमें उस पर नियन्त्रण (control) करना है।

हमारे अन्दर जितनी भी बुरी आदतें (bad habits) हैं उन्हें हमें दूर करना है।

जब हम नियमित रूप से गीताजी पढ़ते हैं, समझने लगते हैं और अपने जीवन में गीताजी में कही बातें अपनाने लगते हैं तो धीरे-धीरे अच्छे गुण हमारे अन्दर आने लगते हैं। यह हमारे निरन्तर प्रयासों, प्रयत्नों पर और हमारी इच्छाशक्ति (will power) पर निर्भर (depend) होता है।

यदि हम कुछ नया सीखना चाहते हैं या अपनी किसी गन्दी आदत (bad habit) को छोड़ना चाहते हैं तो उसे हम इसी प्रकार से धीरे-धीरे ही कर पायेंगे। हमें अपने प्रयत्न निरन्तर करते रहने चाहिये।

दृढनिश्चयः अर्थात् दृढ़ संकल्प, निश्चय से मन में ठान लेना। जैसे हम हर दिन योग करेंगे या सुबह टहलने के लिए जायेंगे (morning walk) ऐसा विचार तो कर लेते हैं परन्तु उसका पालन नहीं करते हैं क्योंकि हम अपने निश्चय पर दृढ़ नहीं रहते। श्रीभगवान् कहते हैं कि यदि तुम्हें मेरा प्रिय बनना है तो अपने निश्चय पर दृढ़ रहना सीखो।

अपने पूज्य स्वामीजी एक बहुत अच्छी बात कहते हैं कि जब हम किसी बात को कल (tomorrow) करेंगे ऐसा सोच कर टाल देते हैं, तब हमें अपने स्वयं को to (Two) morrow (मारो) याने स्वयं को अपने गालों पर दो बार मारना चाहिये जिससे हम अपना आलस छोड़कर, उस काम को करने में तुरन्त लग जाएँगे तो अगली बार जब भी हम किसी बात को कल, tomorrow पर टालने का प्रयत्न करें तो इस बात को ध्यान में लाकर, उस काम को तुरन्त ही कर डालें। काम को कल पर टालने की आदत हमें छोड़नी है।

हम इस प्रकार से कई संकल्प ले सकते हैं।

मय्यर्पितमनोबुद्धिः(र) अर्थात् ईश्वर में अपने मन और बुद्धि को समर्पित (surrender) कर देना। पढ़ाई करते समय हमारा मन तो कहता है चलो टीवी (TV) देखो, पर बुद्धि कहती है, नहीं, पढ़ाई करो। इसी द्वन्द्व से निकलने के लिए श्रीभगवान् कहते हैं कि किसी भी कार्य को करने के पूर्व तुम अपना मन और बुद्धि दोनों ही को मुझ पर समर्पित कर दो, तो तुम अपना कार्य सुचारु रूप से, बाधरहित कर पाओगे।

12.15

यस्मान्नोद्विजते लोको, लोकात्नोद्विजते च यः। हर्षामर्षभयोद्वेगैः(र), मुक्तो यः(स) स च मे प्रियः॥15॥

जिससे कोई भी प्राणी उद्विग्न (क्षुब्ध) नहीं होता और जो स्वयं भी किसी प्राणी से उद्विग्न नहीं होता तथा जो हर्ष, अमर्ष (ईर्ष्या), भय और उद्वेग (हलचल) से रहित है, वह मुझे प्रिय है।

विवेचन- प्रिय भक्त के लक्षण बताते हुए श्रीभगवान् आगे कहते हैं, **यस्मान्नोद्विजते लोको, लोकात्नोद्विजते च यः**, अर्थात् किसी को क्षुब्ध, खिन्न नहीं करना और दूसरो से क्षुब्ध, खिन्न नहीं होना। हम किसी को क्षुब्ध, तङ्ग (disturb) नहीं करेंगे न ही किसी से हम क्षुब्ध, तङ्ग होंगे। बहुत बार किसी के थोड़ा सा कुछ कहने पर हम उत्तेजित हो जाते हैं, क्रोधित हो जाते हैं। किसी-किसी को दूसरों को परेशान करने में आनन्द आता है। ये अच्छी आदतें नहीं हैं। ये आदतें प्रभु को प्रिय नहीं हैं इसी कारण हमें इन्हें छोड़ना पड़ेगा।

हर्षामर्षभयोद्वेगैः(र), मुक्तो यः(स) स च मे प्रियः, यदि हम किसी वस्तु या बात पर बहुत प्रसन्न होते हैं तो उनके न मिलने पर उतने ही दुःखी भी हो जाते हैं। किसी भी बात पर हमें न तो अत्यधिक (बहुत अधिक प्रसन्न) होना है, न ही बहुत दुःखी। सम भाव में रहना है।

मर्ष, याने द्वेष (jealous)। हमें किसी से द्वेष नहीं रखना है। हमें दूसरों की सफलता पर उन्हें बधाई देनी चाहिये, आगे बढ़ने के लिए प्रोत्साहन देना (to appreciate) चाहिये।

भयो, भयरहित (fearless) होना। हमें विपरीत परिस्थिति में डरना नहीं चाहिये, निडर हो कर सामना करना चाहिये।

जैसे बहुत से लोग छोटी-छोटी बातों से जैसे छिपकली, चूहा, तिलचट्टे (cockroach), बिल्ली, कुत्ते आदि से इतना डरते हैं कि दूर से देख कर ही चीखने लगते हैं। हमें अपने डर पर विजय प्राप्त कर के इनका सामना करने का साहस विकसित (develop confidence) करना है।

अगला गुण है, **उद्वेग** रहित होना। बहुत से लोग छोटी-छोटी बातों से एकदम उत्तेजित (aggressive) हो जाते हैं। हमें ऐसा नहीं

करना हैं।

12.16

**अनपेक्षः(श) शुचिर्दक्ष, उदासीनो गतव्यथः।
सर्वारम्भपरित्यागी, यो मद्भक्तः(स) स मे प्रियः॥16॥**

जो अपेक्षा (आवश्यकता) से रहित, (बाहर-भीतर से) पवित्र, चतुर, उदासीन, व्यथा से रहित (और: सभी आरम्भों का अर्थात् नये-नये कर्मों के आरम्भ का सर्वथा त्यागी है, वह मेरा भक्त मुझे प्रिय है।

विवेचन- श्रीभगवान् अगला गुण बताते हैं, **अनपेक्षः(श)** अर्थात् अपेक्षा (expectation) रहित होना, ज्यादा अपेक्षा नहीं रखना। हम केवल लोगों से ही नहीं अपितु अपने स्वयं से भी जीवन के प्रति बहुत अधिक अपेक्षाएँ नहीं रखें क्योंकि अपेक्षा भङ्ग होने पर हम दुःखी हो जाते हैं। जैसे-जैसे हम बड़े होते जायेंगे हममें परिपक्वता (maturity) आने लगेगी और हम अपेक्षारहित हो कर कैसे जीवन जिएं, यह सीख जायेंगे।

शुचिर्दक्ष अर्थात् अन्दर और बाहर दोनों से पवित्र, शुद्ध। बाहर से शुद्धता यानि नियमबद्ध होना। बहुत से लोगों को अपने कपड़े, जूते चप्पल, बस्ता, कॉपी किताबें, अपना कमरा, अपनी टेबल और अपनी सभी वस्तुएं ही इधर-उधर बिखेरने का गन्दा स्वभाव, गन्दी प्रवृत्ति होती है, जो ठीक नहीं है।

वैसे ही अपने मन की सफाई करने के लिये हमें शुद्ध विचार, प्रभु भक्ति, गीताजी का पठन-मनन आदि गुणों को अपनाना होगा।

दक्ष, याने कुशलता। हम जो भी काम करें वह पूरी कुशलतापूर्वक करें।

उदासीन, ज्यादा दुःखी न होना। संयमित (balanced) हो कर प्रत्येक परिस्थिति का सामना करना। कभी अपेक्षित अङ्को से कम अङ्क प्राप्त होने पर हम बहुत दुःखी हो जाते हैं जो ठीक नहीं है। हमें संयमित रहकर और अधिक पढ़ाई करने का प्रण करना चाहिए।

गतव्यथः याने व्यथारहित जिसके सर्व दुःख दूर हो गए हैं। हम छोटी-छोटी बातों पर दुःखी होना छोड़ देंगे तो प्रभु के प्रिय हो जायेंगे।

सर्वारम्भपरित्यागी याने अपने कर्मों को स्वयं ही आरम्भ नहीं करना चाहिये। हमें सभी नये-नये कर्मों के आरम्भ का सर्वथा त्याग करना है।

यदि हम इन सभी गुणों को आत्मसात कर लेंगे तो हम प्रभु के प्रिय भक्त बन जायेंगे।

12.17

**यो न हृष्यति न द्वेष्टि, न शोचति न काङ्क्षति।
शुभाशुभपरित्यागी, भक्तिमान्यः(स) स मे प्रियः॥17॥**

जो न (कभी) हर्षित होता है, न द्वेष करता है, न शोक करता है, न कामना करता है (और) जो शुभ-अशुभ कर्मों से ऊँचा उठा हुआ (राग-द्वेष रहित) है, वह भक्तिमान् मनुष्य मुझे प्रिय है।

विवेचन- श्रीभगवान् अगला गुण बताते हैं, **न हृष्यति** अर्थात् अत्यन्त हर्षित न होना। जो किसी सुख या आनन्द की बात पर अति आनन्दित नहीं होता है, संयमित (balanced) रहता है वह भक्त, प्रभु को प्रिय होता है।

न द्वेष्टि - किसी से भी द्वेष न करना।

न शोचति - जो किसी भी बात पर अति शोक नहीं करता है।

न काङ्क्षति - वह भक्त जो किसी से कुछ भी अपेक्षा नहीं रखता है। ऐसा भक्त प्रभु को प्रिय होता है।

शुभाशुभपरित्याग - प्रत्येक काम के शुभ या अशुभ परिणाम के बारे में सोचकर ही उस कार्य को करने के लिये उद्यत होने के बुरे स्वभाव को छोड़ना होगा, उसका त्याग करना होगा।

इन गुणों को अपने अन्दर उतारने पर हम भी श्रीभगवान् के प्रिय भक्त हो जायेंगे।

12.18

**समः(श) शत्रौ च मित्रे च, तथा मानापमानयोः।
शीतोष्णसुखदुःखेषु, समः(स) सङ्गविवर्जितः॥18॥**

(जो) शत्रु और मित्र में तथा मान-अपमान में सम है (और) शीत-उष्ण (शरीर की अनुकूलता-प्रतिकूलता) तथा सुख-दुःख (मन बुद्धि की अनुकूलता-प्रतिकूलता) में सम है एवं आसक्ति रहित है (और) जो निन्दा स्तुति को समान समझने वाला, मननशील, जिस किसी प्रकार से भी (शरीर का निर्वाह होने न होने में) संतुष्ट, रहने के स्थान तथा शरीर में ममता आसक्ति से रहित (और) स्थिर बुद्धिवाला है, (वह) भक्तिमान् मनुष्य मुझे प्रिय है। (12.18-12.19)

विवेचन- श्रीभगवान् अगला गुण बताते हैं, **समः(श) शत्रौ च मित्रे च** अर्थात् जो भक्त अपने शत्रु से भी मित्रवत् व्यवहार करता है, मित्र और शत्रु दोनों को सम भाव से देखता है वह प्रभु को प्रिय होता है।

मानापमानयोः जो भक्त अपनी स्तुति या अपनी निन्दा दोनों को एक ही दृष्टि से देखता है। परीक्षा में अच्छे अङ्क (marks) की प्राप्ति पर हुई स्तुति या किसी बात पर किए अपमान पर विचलित नहीं होता है।

शीतोष्णसुखदुःखेषु, जो व्यक्ति ठंड (ठण्ड) अथवा गर्मी (सुख और दुःख) दोनों में एक ही भाव से रहता है वह प्रभु को प्रिय होता है। परन्तु हम तो थोड़ी सी ठण्ड अथवा गर्मी लगने पर घबरा जाते हैं, सहन नहीं करते हैं तो प्रभु के प्रिय कैसे बनेंगे। हमें सम भाव में रह कर अपने शरीर को हर परिस्थितियों में ढालने का प्रयत्न करना चाहिये।

समः(स) सङ्गविवर्जितः, जो भक्त अपने निवास स्थल से और अपने शरीर से ज्यादा लगाव रखे बिना सम भाव में रहता है वह प्रभु को प्रिय होता है। अपने प्रिय विषयों जैसे प्रिय भोजन, घूमने जाना, मित्रों से मिलना, खेलना आदि विषयों से आसक्ति (attached) नहीं हैं। इनके न होने पर हमें उद्वेग में नहीं आना चाहिए।

12.19

**तुल्यनिन्दास्तुतिर्मौनी, सन्तुष्टो येन केनचित्।
अनिकेतः(स) स्थिरमतिः(र), भक्तिमान्मे प्रियो नरः॥19॥**

विवेचन- श्रीभगवान् अगला गुण बताते हैं, **तुल्यनिन्दास्तुति**, वह भक्त जिसके लिए स्तुति और निन्दा दोनों सम भाव में होते हैं। न तो वह स्तुति से अहङ्कार (arrogance) में आ जाता है न ही वह अपनी निन्दा होने पर क्रोधित (Angry) ही होता है। जो सदा सम भाव में स्थिर रहता है।

मौनी- मननशील होना। वह भक्त जिसके मन में निरन्तर अच्छे विचार आते रहते हैं।

सन्तुष्टो येन केनचित् - जीवन की प्रत्येक स्थिति में जो स्वयं को अविचलित रखता है, अपेक्षाएँ नहीं रखने से जिसके मन में सन्तुष्टि रहती है।

अनिकेतः(स) - जो अपने आवास से अति लगाव नहीं रखता, श्रीभगवान् कहते हैं कि ऐसा भक्त मुझे प्रिय होता है।

स्थिरमतिः(र) जो कार्य करते हुए अपनी बुद्धि को स्थिर (focused) रखता है। जैसे पढ़ाई करते समय हमें केवल पढ़ाई पर ध्यान देना है। उस समय हमें हमारे मन में अपने खेल के, खाने-पीने के, घूमने जाने आदि के विचार नहीं आने देने हैं। मन को पढ़ाई में ही स्थिर रखना है।

मौनी, - मननशील जिसके मन में सदा अच्छे विचार आते रहते हैं। जो मिला है उसमें प्रसन्न रहना।

अनिकेत, अपने घर से बहुत अधिक लगाव रखना। जैसे बहुत से बच्चे अपने घर से लगाव के कारण घर को छोड़ कर पाठशाला (school) नहीं जाना चाहते हैं और बहुत रोते हैं, ये अच्छी आदत नहीं है।

स्थिर बुद्धि, हमें अपनी बुद्धि स्थिर (steady) रखनी चाहिये जिससे हमारे विचार हमारे लक्ष्य पर केंद्रित (focused) हो जायेंगे। हमें अपने विचारों को अपने लक्ष्य से विचलित नहीं होने देना चाहिये, जैसे अभी हमारा लक्ष्य पढ़ाई कर के परीक्षा में अच्छे अङ्क (marks) लाना है।

12.20

**ये तु धर्म्यामृतमिदं(यँ), यथोक्तं(म्) पर्युपासते।
श्रद्धधाना मत्परमा, भक्तास्तेऽतीव मे प्रियाः ॥12.20॥**

परन्तु जो (मुझ में) श्रद्धा रखने वाले (और) मेरे परायण हुए भक्त इस धर्ममय अमृत का जैसा कहा कहा है, (वैसा ही) भली भाँति सेवन करते हैं, वे मुझे अत्यन्त प्रिय हैं।

विवेचन- श्रीभगवान् कहते हैं कि जो व्यक्ति मेरे बताए हुए सभी उनतालीस गुणों को अपने अन्दर प्रवाहित कर लेता है, वह मुझे अत्यन्त प्रिय होता है।

बच्चों, इस बात को समझ लो और इन गुणों को धीरे-धीरे अपने अन्दर ग्रहण करने का प्रयत्न करते रहो।

बच्चों ने स्वयं को इन सभी गुणों के लिए तीन सौ नब्बे (Three Hundred and Ninety) में से जितने अङ्क (number) दिये वे बच्चों ने संवाद पटल, (chat box) में लिखकर बताया। कुछ बच्चों को पूर्ण अङ्क (full marks) आए। बच्चों ने इस अवलोकन का आनन्द उठाया।

तो इस प्रकार सभी बच्चे भक्तियोग के गुणों को अपने जीवन में उतारने का निरन्तर प्रयास करेंगे।

भगवान् श्रीकृष्ण और स्वामीजी को वन्दन करते हुए विवेचन सम्पन्न हुआ।

हरि नाम कीर्तन के बाद आज का सत्र प्रश्नोत्तरी की ओर बढ़ा।

विचार-मन्थन (प्रश्नोत्तर)-

प्रश्नकर्ता- मेधांशी जी

प्रश्न - बारहवें (12th) अध्याय में प्रथम श्लोक में ही अर्जुन ने प्रश्न पूछे थे या और भी श्लोकों में पूछे हैं?

उत्तर - बारहवें अध्याय के प्रथम श्लोक में ही अर्जुन ने प्रश्न पूछे थे। शेष उन्नीस श्लोकों में श्रीभगवान् ने अर्जुन को समझाया है।

प्रश्नकर्ता- यशराज जी

प्रश्न - पहले श्लोक का अर्थ एक बार फिर बता दीजिये।

उत्तर - पहले श्लोक में अर्जुन श्रीभगवान् से पूछते हैं कि सगुण और निर्गुण उपासकों की परस्पर तुलना करने पर दोनों में से श्रेष्ठ कौन से हैं?

प्रश्नकर्ता- आराध्या जी

प्रश्न - सोलहवें (16th) श्लोक में **उदासीनो गतव्यथः** का अर्थ समझा दीजिए।

उत्तर - **उदासीनो गतव्यथः** का अर्थ है किसी भी प्रकार के दुःख की प्राप्ति पर अधिक विचलित नहीं होना। उसे जीवन का एक भाग मान लेना। उसके लिए अधिक दुःखी ना होकर, स्वीकार (accept) कर लेने वाले भक्त श्रीभगवान् को प्रिय हैं।

॥ ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ॥

**ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासु उपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां (यँ) योगशास्त्रे
श्रीकृष्णार्जुनसंवादे भक्तियोगो नाम द्वादशोऽध्यायः ॥**

इस प्रकार ॐ तत् सत् - इन भगवन्नामों के उच्चारणपूर्वक ब्रह्मविद्या और योगशास्त्रमय श्रीमद्भगवद्गीतोपनिषदरूप श्रीकृष्णार्जुनसंवाद में 'भक्तियोग' नामक बारहवाँ अध्याय पूर्ण हुआ।



हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

<https://vivechan.learngeeta.com/feedback/>

विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!

हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचें। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

जय श्री कृष्ण !

संकलन: गीता परिवार - रचनात्मक लेखन विभाग

हर घर गीता, हर कर गीता!

Let's come together with the motto of Geeta Pariwar, and gift our Geeta Classes to all our Family, friends & acquaintances

<https://gift.learngeeta.com/>

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों किं यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करें।

॥ गीता पढ़े, पढ़ाये, जीवन में लाये ॥
॥ ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ॥